राज्य संप्रदाय विशेष के स्कूलों को पैसा क्यों दे ?

❑ जोहन डे जोंग एवं गेर स्निक

अनुवाद - सुरेश पंडित

आम तौर पर यह स्वीकार किया जाता है कि उदार राज्यों को अनिवार्य शिक्षा के लिए सार्वजनिक स्कूलों को पैसा देना चाहिए । लेकिन यह विवादास्पद है कि राज्य किसी संप्रदाय विशेष के स्कूलों के लिए भी वित्तीय प्रावधान करे। क्या इस तरह का वित्तीय समर्थन उदारवादी निष्पक्षता के सिद्धान्तों से समझौता नहीं है ? प्रस्तुत लेख में लेखक इस मुद्दे पर दो परस्पर विरोधी मतों का आकलन कर रहे हैं । दोनों ही नजरिये उदारवादी निष्पक्षता की अलग अलग व्याख्यांए करते हैं और दोनों ही शिक्षा तथा अच्छाई की संकल्पना के संबंधों पर साफ-साफ अलग दिखने वाला रुख अपनाते हैं। चूंकि इन दोनो में से कोई भी नजरिया संतुष्ट करने वाला नहीं है, यह तर्क देते हुए लेखक एक वैकल्पिक नजरिये को सामने रखते हैं जिसके अनुसार कुछ खास परिस्थितियों में उदार राज्य का ऐसे संप्रदाय विशेष के स्कूलों को वित्तीय सहायता देना उचित हो सकता है ।

शिक्षा एक ऐसा सार्वजनिक एवं प्राथमिक शुभ है जो व्यक्ति और समाज दोनों को फायदा पहुंचाता है इसलिए एक उदार लोकतांत्रिक समाज में यह तर्क दिया जाता है कि राज्य को अनिवार्य शिक्षा के लिए वित्तीय सहायता देनी चाहिए। शिक्षा में बाजार की वकालत करने वाले टुली (1995, 1996, 2000) जैसे चिन्तकों को छोड़कर, अन्य (जैसे - फ्रीडमैन, 1962; कुन्स और शुगरमैन, 1978; चब और मो, 1990), इस बात को स्वीकार करते हैं कि प्राथमिक और प्रारंभिक शिक्षा के लिए वित्तीय प्रावधान सार्वजनिक तौर पर किया जाना चाहिए।

प्राय: यह माना जाता है कि सार्वजनिक स्कूलों का खर्चा राज्य द्वारा वहन किया जाना चाहिए। लेकिन क्या राज्य सम्प्रदाय विशेष के स्कूलों को भी पैसा दे अर्थात् उन स्कूलों को जिनमें शिक्षा किसी खास धर्म पर आधारित हो या अच्छाई की किसी विशेष संकल्पना को आधार मानकर शिक्षा दी जाती हो। यह मुद्दा अत्यधिक विवादास्पद है। क्या इस तरह का वित्तीय प्रावधान चर्च और राज्य के अलगाव के मद्देनजर एक अटपटी स्थिति नहीं है। क्या यह उदारवादी निष्पक्षता के सिद्धांत के साथ समझौता नहीं है? क्या सम्प्रदाय विशेष की शिक्षा भी जनता के लिए एक प्राथमिक शुभ* है? (फिटज मौरिस, 1993) क्या सम्प्रदाय विशेष के स्कूलों की वित्तीय सहायता को व्यक्ति स्वायत्तता की शर्त से जोड़ा जा सकता है ? इस लेख के ये केन्द्रीय सवाल हैं। मुख्य मुद्दा यह नहीं है कि बतौर जनता (प्राइवेट पर्सन) हम किस तरह की शिक्षा पाने की इच्छा कर सकते हैं, बल्कि यह है कि राज्य के वित्तीय समर्थन से चलने वाली किस प्रकार की शिक्षा को चुनने की आजादी समुदाय-समूहों और अभिभावकों के पास है। यहां जोर इस बात पर है कि शिक्षा को सार्वजनिक वित्तीय समर्थन के लिए उदार राज्य को किस हद तक इजाजत दी जाए और उसके लिए क्या शर्तें तय की जानी चाहियें।

नीदरलैंड और बेल्जियम में दोनों तरह के स्कूलों अर्थात् सार्वजनिक एवं सम्प्रदाय विशेष के स्कूलों को राज्य के द्वारा पूरी तरह से वित्तीय सहायता दी जाती है । इस नीति ने बीसवीं सदी में सम्प्रदाय विशेष के स्कूलों के विकास में बहुत बड़ा योगदान दिया है। उन्नीसवीं सदी में जब सम्प्रदाय विशेष के स्कूलों को महज सहन किया जाता था, तब वहां ऐसे बहुत ही कम स्कूल थे। दूसरे बहुत से उदार लोकतांत्रिक देशों में संप्रदाय विशेष की शिक्षा को प्राय: ऐसे प्राथमिक शुभ के तौर पर स्वीकार नहीं किया जाता कि उसे पूरी तरह से राज्य का वित्तीय समर्थन दिया जाए। उदाहरण के लिए फ्रांस में सम्प्रदाय विशेष के स्कूलों को सहन तो कर लिया जाता है परन्तु उन पर सरकार द्वारा पैसा खर्च नहीं किया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के कुछ राज्यों में जो अभिभावक सम्प्रदाय विशेष की शिक्षा को चुन लेते हैं उन्हें करों में राहत मिलती है, क्योंकि वहां इन स्कूलों को चलाये रखने के लिए राज्य आंशिक रूप से जिम्मेदार होता है।

राज्य द्वारा समर्थित सम्प्रदाय विशेष के स्कूलों पर चलने वाली बहसों में उल्लेखनीय रूप से परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों को

* प्राथमिक शुभ वे सार्वजनिक प्रावधान हैं जो प्राथमिक मूल्यों की अभिव्यक्ति करते हैं।

पहचाना जा सकता है। ऐसे देशों में जहां संप्रदाय विशेष के स्कूलों की हालत अपेक्षाकृत खस्ता है (जिनके चलने को सहन तो किया जाता है किन्तु वित्तीय सहायता नहीं दी जाती या केवल आंशिक तौर पर वित्तीय सहायता दी जाती है) में यह विचार जमीनी रूप लेता हुआ-सा दिखाई देता है कि सरकार को सभी तरह की प्राथमिक शिक्षा को वित्तीय समर्थन देना चाहिए। संयुक्त राज्य अमेरिका में वाऊचर प्रणाली को लाने की वकालत की जा रही है,जिसके तहत अभिभावकों के चयन के परिणामस्वरूप संप्रदाय विशेष के स्कूलों को राज्य परोक्ष रूप से वित्तीय समर्थन देगा। ब्रिटेन में संप्रदाय विशेष के स्कूलों को सशर्त वित्तीय सहायता का बचाव इस बात को आधार बनाकर किया जाता है कि राज्य द्वारा समर्थित संप्रदाय विशेष के स्कूलों में अभिभावक अपने बच्चों को अपनी बुनियादी संस्कृतियों से अवगत करा सकें (मैक्लोहलिन 1997, विलियम्स 1998) ।

जिन देशों में संप्रदाय विशेष के स्कूल परम्परागत तौर से मजबूत हालत में रहे हैं (पूरी तरह से वित्तीय समर्थन के कारण), वहां संप्रदाय विशेष की शिक्षा पर लगातार आक्रमण बढ़ते जा रहे हैं। नीदरलैंड में इस बात ने काफी जोर पकड़ा है कि चर्च और राज्य के अलगाव का सिद्धांत तथा सम्प्रदाय विशेष के स्कूलों को सार्वजनिक वित्तीय समर्थन में एक विरोधाभास है तथा इसके साथ ही वहां सम्प्रदाय विशेष के स्कूलों पर कई अन्य एतराज भी खड़े किये गये। कहा यह जा रहा है कि ये स्कूल धार्मिक तथा नैतिक बंटवारे में सहयोग दे रहे हैं; सामाजिक तथा आर्थिक अलगाव बढ़ा रहे हैं (आंशिक तौर पर अप्रवासी समूहों द्वारा शिक्षा की स्वतंत्रता के अधिकार का इस्तेमाल करने की वजह से); और अन्ततः यह शिक्षण-शास्त्रीय शंका कि वे अभिभावकों तथा समुदाय को अपने अनुसार अनुकूलित करने में सक्षम हैं।(स्निक और डे जोंग 1995)।

यदि हम सम्प्रदाय विशेष के स्कूलों को सार्वजनिक वित्तीय समर्थन, पर हाल में ही प्रकाशित राजनैतिक तथाा शिक्षा-दर्शन के साहित्य पर नजर डालें (देखें मैकलॉहलिन, 1992; हॉल्स्टेड 1995; कॉलॉन 1997; ब्राड हाऊस 1998; विलियम्स 1998; बर्टनवुड 2000) तो हम दो परस्पर विरोधी नजरियों को देख सकते हैं। (हम अपने आपको उदारवादी नजरिये तक सीमित रखते हैं) एक तरफ वह 'उदारवादी शिक्षायी' नजरिया है जिसके अनुसार उदार राज्यों को केवल सार्वजनिक स्कूलों को वित्तीय सर्मथन देना चाहिए तथा सम्प्रदाय विशेष के स्कूलों को सहन कर लेना चाहिए। दूसरी तरफ 'मानक उदारवादी' नजरिया यह मानता है कि केवल संप्रदाय विशेष के स्कूलों को ही आर्थिक सहायता मिलनी चाहिए। दोनों ही नजरिये उदारवादी निष्पक्षता के सिद्धांत को प्रारंभ से ही स्वीकार कर चलते हैं, लेकिन वे इस सिद्धांत की बिल्कुल अलग-अलग व्याख्या करते हैं। और दोनों ही नजरियों में शिक्षा और अच्छाई की संकल्पना के बीच के संबंधों पर पर अलग-अलग पूर्व मान्यतायें हैं। इस लेख में हम इन दोनों नजरियों में अन्तर्निहित, मुख्य पूर्व मान्यताओं का मूल्यांकन और उनकी पुनर्रचना करेंगे। इसके बाद हम इस वैकल्पिक दृष्टिकोण के पक्ष में तर्क देंगे कि उदार राज्य को कुछ शर्तों के साथ संप्रदाय आधारित स्कूलों को आर्थिक सहायता देनी चाहिए। अन्तिम भाग में संप्रदाय आधारित स्कूलों को सहायता देने के लिए चार शर्तों को गढ़ा गया है। लेकिन इससे पहले यहां हमारी जरूरत है कि उदार निष्पक्षता के सिद्धांत को विस्तार दें।

1. उदार निष्पक्षता और प्राथमिक मूल्य

इस भाग में दो केन्द्रीय अवधारणाओं, उदार निष्पक्षता और प्राथमिक मूल्य (अथवा अच्छाई), को समझाया गया है। इसके अतिरिक्त उदार नैतिकता और धर्म के अन्तर्सम्बन्ध पर कुछ टिप्पणियां की गई हैं।

1.1 उदार निष्पक्षता

उदार निष्पक्षता का अर्थ है कि राज्य अच्छाई की विवादास्पद अवधारणाओं के प्रति एकदम से तटस्थ रहे। सार्वजनिक संस्थाओं और सार्वजनिक नीति को अच्छाई की किसी खास समझ पर आधारित नहीं होना चाहिए। उदार राज्य को आजादी के अधिकारों को सुलभ बनाने और उनकी सुरक्षा करने तक स्वयं को सीमित रखना चाहिए। उदार निष्पक्षता राज्य पर एक प्रकार की बाध्यता डालती है : क्योंकि नागरिकों को अच्छाई की उनकी अपनी संकल्पना के मुताबिक जीने का अधिकार होता है, राज्य को अपने नागरिकों के प्राथमिक हितों मसलन स्वतंत्रता, सुरक्षा तथा आमदनी के अधिकार का सम्मान कर उन्हें सशक्त बनाना चाहिए। अर्थात् उदार निरपेक्षता पूरी तरह से मूल्य तटस्थता के साथ बंधी हुई नहीं होती क्योंकि यह तार्किक रूप से असंभाव्य होता है । (स्ट्राईक 1991)

समकालीन उदारवाद में वैयक्तिक स्वाधीनता का अधिकार सर्वोपरि है (जोहनस्टन, 1994)। नागरिकों को यह अधिकार है कि वे अपने हित की संकल्पना को निर्मित करें, उस पर चलें और चाहें तो उसमें संशोधन कर लें (राल्स, 1973)। उदार नैतिकता की यह व्याख्या एक ऐतिहासिक विकास का परिणाम है (काइम लिक्का, 1989, 1995)। केवल द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद से ही वैयक्तिक अधिकारों की सुरक्षा, खास तौर पर व्यक्ति की स्वायत्तता के अधिकार की सुरक्षा पर जोर दिया जाने लगा है।

व्यक्तिगत अधिकारों की प्रमुखता पहले से यह मानकर चलती

है कि व्यक्ति ही नैतिक बल रखता है (काइमलिक्का 1989 पृ. 140; जोहनस्टन 1994, पृ.18)। वर्गों और वर्ग के अधिकारों का महत्व तभी है जब वे व्यक्ति के अधिकारों का बोध कराने में अपना योगदान दें। जबकि हाल ही में कुछ उदारवादियों ने वर्ग के अधिकारों की पुनर्स्थापना पर जोर देना शुरू किया है, इनका इस बात पर जोर है कि एक (सांस्कृतिक) समुदाय की सदस्यता विकास और व्यक्तिगत स्वायत्तता के प्रयोग तथा पहचान के लिए आवश्यक है। (काइमलिक्का, 1995) लेकिन उनकी मूलभूत धारणा यही है कि समुदाय व्यक्तिगत अधिकारों की सीमा का न तो उल्लंघन करें और न उनकी उपेक्षा करें। यदि उदार नैतिकता यह कहती है कि व्यक्तियों को अपने हित की संकल्पना के अनुसार जीने और विकास करने के लिए राज्य के विरूद्ध एक बचाव का अधिकार है तो उन्हें यह भी अधिकार है कि वे जिस समुदाय में पैदा हुए हैं उससे भी उनकी सुरक्षा की जाए।

1.2 प्राथमिक (बुनियादी) मूल्य

उदार निष्पक्षता इस सिद्धांत की ओर इशारा करती है कि राज्य को धार्मिक गतिविधियों और निजी क्षेत्र में होने वाले विकासों को प्रत्यक्ष सहायता/समर्थन देने से बचना चाहिए। लेकिन राज्य पर उन्हें सुविधा प्रदान करने की भी जिम्मेदारी बनती है। उसे स्वाधीनता के अधिकारों की सुरक्षा करनी चाहिए और ऐसी परिस्थितियां पैदा करनी चाहिए जो उन अधिकारों के प्रयोग के लिए उसे सक्षम बनायें। दूसरे शब्दों में कहें तो एक निष्पक्ष उदार राज्य को प्राथमिक शुभों की सहायता तथा वित्तीय पोषण तो करना ही चाहिए लेकिन उसे निजी क्षेत्र में गौण(दूसरे दर्जे के) मूल्यों का समर्थन नहीं करना चाहिए।

प्राथमिक शुभ उन मूल्यों को व्यक्त करते हैं जिन्हें प्राय: प्रत्येक विवेकवान व्यक्ति अपनी अच्छाई की संकल्पना का लिहाज किये बगैर स्वीकार करता है (रॉल्स, 1973, 1993)। रॉल्स के अनुसार कुछ खास शर्तों (जैसे स्वाधीनता के अधिकार, आवागमन की आजादी, आमदनी, आत्मसम्मान) को पूरा करना जरूरी है जिससे लोग अच्छा जीवन जी सकें । ये प्राथमिक शुभ अच्छाई की किसी खास संकल्पना पर आधारित नहीं हैं बल्कि व्यक्ति की राजनैतिक अवधारणा में अन्तर्निहित हैं (राल्स, 1993)। हालांकि 'गौण मूल्य' बदलते रहते हैं और वे शुभ की भिन्न-भिन्न संकल्पनाओं तथा परंपराओं पर निर्भर रहते हैं। उदाहरण के लिये ईसाइयों की भलाई की अवधारणाओं में दानशीलता और करुणा के मूल्यों को बहुत महत्व दिया गया है, जबकि उपभोक्तावाद में वैयक्तिक आवश्यकताओं की पूर्ति उसके केन्द्रीय मूल्य के रूप में दिखाई देती है।

किन मूल्यों को प्राथमिक मूल्य माना जाये इस पर उदारवादी असहमत दिखते हैं। प्राथमिक शुभ की प्रकृति तथा विषय-वस्तु के संदर्भ में अलग-अलग मतों का जुड़ाव उदारवादी नैतिकता के विभिन्न नजरियों से है। रॉल्स का दृष्टिकोण भी विवादास्पद है (आर्नेसन, 1990)। उसकी सबसे प्रमुख आलोचना यह है कि रॉल्स शुभ की अवधारणाओं की निर्मिति पर एक नितान्त व्यक्तिवादी विचार रखता है। उदाहरण के लिए काइम लिक्का दलील देता है कि रॉल्स अच्छाई की संकल्पनाओं की सामाजिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के हालातों को नजरअंदाज करता है। इसलिए प्राथमिक शुभों की सूची में सांस्कृतिक सदस्यता के मूल्य को और जोड़ देना चाहिए। (काइम लिक्का 1989, 1995)।

1.3 उदार नैतिकता और धर्म के बीच अन्तर्सम्बन्ध

उदार नैतिकता आवश्यक रूप से धर्म की विरोधी नहीं है (वाइथमैन,1997)। उदारवाद पहले से ही अच्छाई की अवधारणाओं के अस्तित्व और प्रचलन को स्वीकारता है। नागरिकों को निजी जीवन की जरूरत होती है। उदार नैतिकता इस बात को सुनिश्चित करती है कि लोग अपनी निजी जिन्दगियों में अपने नैतिक और धार्मिक मतों का पालन कर सकते हैं। उदार नैतिकता न तो धर्म को अपदस्थ करती है और न इससे प्रतिद्वन्द्विता करती है (केकेस, 1995 पृ. 22)। इसके बजाय सार्वजनिक उदार नैतिकता और शुभ की अवधारणाएं नैतिकता के दो पूरक स्तर होते हैं। उदारवादी मानते हैं कि उदार मूल्य आवश्यक तो होते हैं किन्तु एक अच्छा जीवन जीने के लिए पर्याप्त शर्त नहीं होते।

उदार नैतिकता यह निर्देश देती है कि हर समुदाय और हर नागरिक को दूसरे समुदायों और नागरिकों के स्वाधीनता के अधिकारों का आवश्यक रूप से सम्मान करना चाहिए। अनुदारवादी, खासतौर पर कट्टरतावादी समुदाय इस दृष्टिकोण को खारिज करते हैं। वे इस बात में यकीन करते हैं कि संपूर्ण (धार्मिक) सत्य का अपने समुदाय में और इससे बाहर प्रचार करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य होता है। उनके अनुसार इस मत के विरोधियों को धर्म की स्वतंत्रता का कोई अधिकार नहीं होता; उनके पास सत्य का ही अधिकार होता है। राज्य का यह कर्तव्य है कि वह सच्चे धर्म को प्रोत्साहन दे और झूठे धर्मों को दबाये। बहुत से ऐसे समुदाय भी होते हैं जो अवसर मिलते ही उदारवाद को अपना लेते हैं ताकि शुभ की अनुदार अवधारणाओं को प्रचलित रख सकें और उन्हें फैला सकें। लेकिन यदि उनके हाथ में सत्ता आ जाती है तो वे उदारवाद को एक तरफ पटक देंगे और उनके अपने शुभ की अवधारणाओं को दूसरों पर थोपने में संकोच नहीं करेंगे (गटिंग, 1999, पृ. 169)।

स्वायत्तता का अधिकार स्वतंत्रता के प्रति एक कर्तव्य को

प्रकट नहीं करता। अनुदार समुदाय के सदस्यों को अनुदार तरीके से जिन्दगी जीने की स्वतंत्रता है। लेकिन यह दूसरे नागरिकों के स्वतंत्रता के अधिकारों का सम्मान करने के लिए अवश्य बाध्य करती है। उदार नैतिकता की सबसे सूक्ष्म अवधारणा भी उस दृष्टिकोण का विरोध करती है जो समुदायों को स्वतंत्रता के अधिकारों का उल्लंघन करने की इजाजत देती है। (काइम लिक्का, 1995 पृ. 159, स्ट्राइक 1998, पृ. 348)। उदार नैतिकता की हर व्याख्या निजी क्षेत्र के लिए कोई न कोई निष्कर्ष अवश्य देती है। सारे उदारवादी मांग करते हैं कि समुदायों को दूसरे समुदायों और नागरिकों के स्वतंत्रता के अधिकारों का सम्मान करना चाहिए। इसके अतिरिक्त वे यह भी तर्क देते हैं कि समुदायों को उनके अन्दर रहने वालों को छोड़कर जाने के अधिकार का भी सम्मान करना चाहिए (रॉल्स 1993, गैल्सटन 1995)। यह मांग स्पष्ट तौर पर बहुत से अनुदार धर्मों की आन्तरिक मान्यताओं तथा दुनिया के उन विचारों के विरोध में जाती है जो यह नहीं जानते कि धर्म कोई ऐसी वस्तु है जिसे व्यक्ति के चुनाव पर छोड़ा जा सकता है। उनका मानना है कि धर्म कोई निजी मामला नहीं है (फिट्जमॉरिस 1993 पृ. 51) इसलिए एक उदार राज्य अनुदार समुदायों के सदस्यों से अनिवार्यत: यह मांग करता है कि वे उन मूल्यों के अनुरूप स्वयं को बनायें जो उनकी चेतना के प्रतिकूल होते हैं (सान्डल, 1996)। लेकिन इसमें कोई दूसरा विकल्प नहीं है। उदार राज्य को, अनुदार समुदायों को प्रतिबंधित करना ही चाहिए (ब्लैकर 1998)।

2. एक प्राथमिक मूल्य के रूप में शिक्षा

हमारे समाज में प्राय: प्रत्येक व्यक्ति इस बात से सहमति जताता है कि शिक्षा एक ऐसा प्राथमिक शुभ है जिसका वित्तपोषण राज्य द्वारा किया ही जाना चाहिए । ठीक स्वास्थ्य, स्वच्छ वायु और आमदनी की तरह शिक्षा भी एक ऐसी शर्त है जिसे शुभ की सभी अवधारणाओं में पहले से मान्यता मिली हुई है। शिक्षा नागरिकों को समाज में भागीदारी निभाने, अपनी स्वतंत्रता के अधिकार का उपयोग करने और स्वाधीनतापूर्वक अपना जीवन जीने के लायक बनाती है। (राल्स प्राथमिक शुभों की सूची में शिक्षा का उल्लेख तो नहीं करता लेकिन यह जरूर मानता है कि उसकी यह सूची पूरी नही है।)

फिर भी शिक्षा एक खास प्राथमिक शुभ अवश्य है। पहली बात यह है कि यह दाना और पानी की तरह जीने की बुनियादी शर्त नहीं है। बिना शिक्षा के भी लोग जी सकते हैं और अपना जीवन निर्वाह कर सकते हैं। मनुष्य के अस्तित्व के लिए समाजीकरण एक अनुभव सिद्ध आवश्यक शर्त है लेकिन शिक्षा (स्कूली शिक्षा) नहीं है। तथापि आधुनिक समाज में शिक्षा एक प्राथमिक शुभ बन गई है। विभिन्न सांस्कृतिक और धार्मिक पृष्ठभूमि वाले लोग इसे स्वीकारते हैं।

शिक्षा को विशेष प्राथमिक शुभ मानने का एक अन्य कारण भी है। शिक्षा क्या है और किस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए है यह विवादास्पद मूल्य आमुखीकरणों पर निर्भर करता है (वारनोक 1994 तथा खण्ड 3.2 को भी देखें)। इस सवाल पर विवाद है कि किन शर्तों के तहत शिक्षा प्राथमिक शुभ बनती है और उसे राज्य का समर्थन मिलना चाहिए। इसके साथ ही इस बात पर भी सहमति नहीं है कि किस तरह के स्कूलों को आर्थिक मदद मिलनी चाहिए और किन सिद्धांतों पर शिक्षा पद्धति आधारित होनी चाहिए।

3. संप्रदाय विशेष के स्कूलों को वित्तीय सहायता देने पर परस्पर विरोधी नजरिये

उदार निष्पक्षता के सिद्धांत के द्वारा शिक्षा के लिए सार्वजनिक सरकारी आर्थिक सहायता को सीमाबद्ध किया गया है। परिभाषा से ही उदार निष्पक्षता उस पूर्णतावादी नीति के प्रति असहमति जताती है जिसमें राज्य (सार्वजनिक) शिक्षा द्वारा एक खास तरह के शुभ की अवधारणा को विकसित करता है। लेकिन उदार नैतिकता जिस तरह की मांग करती है वह भी विवादास्पद है। इस भाग में हम उस सवाल के दो परस्पर विरोधी उत्तरों की पुनर्रचना कर रहे हैं जो उन शर्तों को प्रकट करता है जिनके तहत उदार राज्य को संप्रदाय विशेष के स्कूलों का समर्थन करना चाहिये और कदाचित उन्हें वित्तीय पोषण भी देना चाहिए।

3.1 उदार निष्पक्षता और संप्रदाय विशेष के स्कूलों का वित्तपोषण परस्पर विरोधी सिद्धांत हैं ।

उदार शैक्षिक दृष्टिकोण मानता है कि संप्रदाय विशेष के स्कूल और राज्य की निष्पक्षता एक दूसरे से असंगत हैं। बहुत से लोग इस दृष्टिकोण से सहमति जताते हैं। बहुत से उदार राज्यों में केवल सार्वजनिक शिक्षा को ही प्राथमिक शुभ की तरह माना जाता है और इसलिए सरकार उसी को धन देती है। संप्रदाय विशेष के स्कूलों को सहन तो किया जाता है लेकिन उसे राज्य द्वारा वित्तीय समर्थन नहीं दिया जाता। क्योंकि ऐसी शिक्षा कुछ खास समुदायों के गौण मूल्यों से संबंद्ध होती है। यदि नागरिक संप्रदाय विशेष की शिक्षा चाहते हैं तो उन्हें उसकी वित्तीय व्यवस्था भी स्वयं करना चाहिए ।

उदारवादी शैक्षिक दृष्टिकोण में यह पूर्व मान्यता है कि सार्वजनिक शिक्षा का उद्देश्य द्वितीयक (गौण) मूल्यों पर नहीं बल्कि सीधे प्राथमिक मूल्यों से जुड़े होने पर आश्रित होता है। (मैक्लोहलिन, 1995)। सार्वजनिक स्कूलों और संप्रदाय विशेष के स्कूलों के

बीच एक अनिवार्य भेद है। समकालीन पश्चिमी समाजों में उदार नैतिकता के प्रमुख मूल्य सार्वजनिक वैधता प्राप्त किये हुए होते हैं जबकि गौण मूल्यों को केवल निजी (प्राइवेट) वैधता ही मिली होती है। उदार राज्य का उन सार्वजनिक स्कूलों में मदद देना न्याय संगत तो है ही, साथ ही बाध्यकारी भी है जिनमें गौण (द्वितीयक) मूल्यों के लिए स्थितियां विकसित होती हैं। लेकिन इसे गौण मूल्यों को सीधा समर्थन देने से बचना चाहिए।

यदि ये दलीलें जायज हैं तो राज्य को संप्रदाय विशेष के स्कूलों की मदद नहीं करनी चाहिए। राज्य इन्हें सहन करें या नहीं करें, यह बहस का विषय है। कुछ लोगों का विचार है कि इन्हें मदद दे देनी चाहिये यदि समुदाय समाज से अलग हो जाते हैं। दूसरे लोग कहते हैं कि किसी उदार समाज को उस अनुदार शिक्षा को सहन नहीं करना चाहिये जो बच्चे के अधिकारों, विशेष रूप से बाहर जाने (समुदाय से) के अधिकार का उल्लंघन करती है।

3.2 संप्रदाय विशेष के स्कूलों को आर्थिक सहायता देना राज्य की निष्पक्षता का परिचायक है ।

मानक उदार दृष्टिकोण सार्वजनिक शिक्षा का पक्ष लेने का विरोधी है (वाईसोंग 1994)। यह विचार कि शिक्षा एक प्राथमिक शुभ है इसलिए राज्य को सार्वजनिक स्कूलों का आर्थिक पोषण करना चाहिए, को खारिज कर दिया गया है। इसके बजाय यह दावा किया जाता है कि उदार निष्पक्षता के लिए यह आवश्यक है कि वह संप्रदाय विशेष की शिक्षा को आर्थिक सहायता दे और यह विचार निष्पक्ष सार्वजनिक शिक्षा को पैसे देने के विचार के विपरीत है।

इसके पीछे मान्यता यह है कि शिक्षा हमेशा गौण मूल्यों से बंधी होती है । यदि शिक्षा एक प्राथमिक शुभ है (और ऐसा तो है ही, यह इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि वे सारे लोग, जो अलग-अलग गौण (द्वितीयक) मूल्यों से बंधे हैं, मानते हैं कि शिक्षा उनके शुभ की अवधारणा को इस्तेमाल करने की एक आवश्यक शर्त है।) तो कोई भी बात संदर्भ निरपेक्ष नहीं हो सकती, और इसीलिए एक उदार समाज में नागरिकों और समुदायों को यह सुविधा मिलनी ही चाहिए कि वे अपनी प्राथमिक शुभ की अन्तर्वस्तु का फैसला कर सकें। जबकि राज्य की निष्पक्षता के सिद्धांत का तात्पर्य यह भी है कि सार्वजनिक रूप से वित्तपोषित संप्रदाय विशेष के स्कूलों की मांग को वह पूरा करे। क्योंकि राज्य ही उन हालातों को पैदा करता है जो स्वतंत्रता के अधिकारों के उपयोग को संभव बनाते हैं। इसलिए संप्रदाय विशेष के स्कूलों में नागरिक शिक्षा का दिया जाना अनिवार्य होना चाहिये (गॉल्सटन, 1995)।

प्राथमिक शुभ उन मूल्यों को व्यक्त करते हैं जिन्हें प्राय: प्रत्येक विवेकवान व्यक्ति अपनी अच्छाई की संकल्पना का लिहाज किये बगैर स्वीकार करता है (रॉल्स, 1973, 1993)। रॉल्स के अनुसार कुछ खास शर्तों (जैसे स्वाधीनता के अधिकार, आवागमन की आजादी, आमदनी, आत्मसम्मान) को पूरा करना जरूरी है जिससे लोग अच्छा जीवन जी सकें । ये प्राथमिक शुभ अच्छाई की किसी खास संकल्पना पर आधारित नहीं हैं बल्कि व्यक्ति की राजनैतिक अवधारणा में अन्तर्निहित हैं (राल्स, 1993)।

इस मानक उदार दृष्टिकोण की वकालत करने वाले लोग यह तर्क देते हैं कि वह राज्य जो सार्वजनिक स्कूलों को पैसा देता है लेकिन सम्प्रदाय विशेष के स्कूलों को सहन नहीं करता, अभिभावकों को मजबूर करता है कि वे अपने बच्चों को तथाकथित निष्पक्ष सार्वजनिक स्कूलों में भेजें। यह मौलिक स्वतंत्रता के अधिकारों का उल्लंघन है। यही बात उस राज्य पर भी लागू होती है जो संप्रदाय विशेष के स्कूलों को सहन तो करते हैं लेकिन उन्हें आर्थिक संरक्षण नहीं देते । इस तरह का राज्य अभिभावकों (खास तौर से गरीब अभिभावकों) को अपने बच्चों को सार्वजनिक स्कूलों में भेजने के लिए बाध्य करता है। वे अपने बच्चों को अपने शुभ की अवधारणा को पढ़ा नहीं पाते। इसलिए वह राज्य, जो अपने बच्चों को अपने मूल्यों के अनुसार पढ़ाने के अभिभावकों के अधिकार का बचाव करता है, उसे इसके लिए दृढ़ प्रतिज्ञ होना चाहिए तथा संप्रदाय विशेष के स्कूलों को आर्थिक मदद देने वाला होना चाहिये।

ये समर्थक यह भी मानते हैं कि शिक्षा हमेशा से गौण मूल्यों को पूर्व मान्यता के रूप में स्वीकार कर लेती है इसलिए सार्वजनिक स्कूलों का विचार उसके लिए वास्तव में एक कल्पना मात्र होता है। सार्वजनिक स्कूल पहले से कुछ नियत गौण मूल्यों को स्वीकार कर लेते हैं। सच्चाई तो यह है कि सार्वजनिक स्कूल अपने आप में एक विरोधाभास हैं (वाईसोंग, 1994)। राज्य को शिक्षा के उद्देश्यों और उसकी अन्तर्वस्तु पर किसी खास नजरिये को प्रोत्साहन देने से स्वयं को रोकना चाहिए। यदि शिक्षा प्राथमिक शुभ है और उसकी अन्तर्वस्तु द्वितीयक मूल्यों पर आधारित है तो राज्य को आवश्यक तौर पर संप्रदाय विशेष के स्कूलों को वित्तीय सहायता

देनी चाहिए और सार्वजनिक स्कूल की विषयवस्तु को अभिभावकों तथा समुदायों के लिए छोड़ देना चाहिए (एडम्स, 1997)।

4. क्या शैक्षिक मूल्य आमुखीकरण गौण (द्वितीयक) मूल्यों पर निर्भर होते हैं ?

संप्रदाय विशेष के स्कूलों को वित्तीय पोषण का विवाद शैक्षिक मूल्य आमुखीकरणों और गौण (द्वितीयक) मूल्यों के बीच के संबंध पर चली आ रही कट्टरवादी असहमति पर आधारित है। जबकि उदार शैक्षिक दृष्टि पहले से (जिसे हम कहते हैं) स्वाधीनता की धारणा को मानती है और मानक उदार दृष्टि निर्भरता की धारणा को मानती है (स्ट्राइक, 1991, पृ. 423, 430; एडम्स, 1997; लीही,1998)।

दूसरे अर्थात् निर्भरता की धारणा रखने वाले लोग मानते हैं कि शिक्षा का उद्देश्य सैद्धांतिक रूप से हमेशा एक खास परम्परा के गौण मूल्यों से जुड़ा रहता है। वे सिद्धांत जो विवेकशीलता, नैतिकता, आलोचनात्मक चिन्तन और स्वायत्तता को परिभाषित और निर्मित करते हैं सदा एक परम्परा के सर्वव्यापी पूर्वानुमान रहे हैं (मैक्लनटायर, 1984)। प्रमुख मांग यह है कि हर परंपरा विवेकपूर्ण जिज्ञासा और नैतिकता के लिए अपनी कसौटी स्वयं बनाती है। परम्पराएं परस्पर असंगत होती हैं (क्रिटेन्डर 1994 पृ. 294-301)। प्रत्येक परंपरा अच्छाई की एक खास अवधारणा को आत्मसात किए होती है (और वह शिक्षा के बारे में भी अपनी एक अवधारणा रखती है) और उसकी शिक्षित व्यक्ति की अवधारणा उसी पर आधारित होती है। निर्भरता के सिद्धांत को मानने वाले यह भी कहते हैं कि उदार शिक्षा के आदर्श, सिद्धांत और कसौटियां कोई खास (दूसरे दर्जे की) हैसियत नहीं रखते। उदार शिक्षा ओर परम्परागत धार्मिक शिक्षा के बीच कोई सैद्धांतिक भिन्नता नहीं होती क्योंकि दोनों में ही शिक्षा के उद्देश्य एक परंपरा, 'ज्ञानमीमांसीय पुरातनता' की अविवेकी पूर्वमान्यताओं पर आश्रित होते हैं। शिक्षा इस अर्थ में एक प्रमुख गुण है क्योंकि हर एक व्यक्ति शिक्षा को मूल्यवान समझता है लेकिन वह अच्छाई की अवधारणाओं के बारे में कभी निष्पक्ष नहीं होती क्योंकि वह गौण मूल्यों पर ही निर्भर रहती है।

आत्मनिर्भरता की धारणा रखने वाले स्वीकारते हैं कि बहुत सी शैक्षिक प्रणालियां शुभ की अवधारणाओं पर निर्भर रहती हैं। लेकिन वे यह मानने से इन्कार करते हैं कि यह कोई सैद्धांतिक अनिवार्यता है (हर्स्ट, 1974)। शिक्षा के उद्देश्य आवश्यक तौर पर परम्परा के गौण मूल्यों पर निर्भर नहीं रहते। खासतौर पर उदार शिक्षा के उद्देश्य, उदार नैतिकता के प्राथमिक मूल्यों से सीधे-सीधे जुड़े होते हैं जो परंपरा के गौण मूल्यों से बढ़कर होते हैं। इस धारणा को मानने वाले कहते हैं कि मात्र उदारवाद ही कोई शुभ की अवधारणाओं का विरोध करने वाला नहीं है। स्वायत्तता, मस्तिष्क की स्वाधीनता, उदारहृदयता, विवेकशीलता, आलोचनात्मक चिन्तन और अन्य उदार मूल्य जो 'अच्छाई की विविधता' के भाग नहीं हैं (सीगल, 1999)। उनके विचार में वे कट्टर और सार्वभौम सिद्धांत जो आलोचनात्मक चिन्तन और स्वायत्तता को तय करते हैं खास परम्पराओं से परे होते हैं। इसलिए उदार शिक्षा और परम्परागत मूल्यों के संचरण के बीच, 'पारम्परिक आत्म रूप' और 'उदार आत्म रूप' के बीच एक अनिवार्य भेद होता है (हर्स्ट, 1974 स्ट्राइक, 1991)।

महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि कौन सही है ? क्या शिक्षा आवश्यक रूप से गौण मूल्यों से जुड़ी रहती है ? यदि स्वाधीनता वाली धारणा सही है तो उदार निष्पक्षता का यह निहितार्थ होता है कि सार्वजनिक स्कूलों को आर्थिक सहायता देनी चाहिए। यदि निर्भरता की धारणा सही है तो इस दृष्टिकोण की वकालत करने वाले लोगों का यह कहना महत्व रखता है कि राज्य को संप्रदाय विशेष के स्कूलों का वित्तीय पोषण करना चाहिए। क्योंकि यदि सार्वजनिक शिक्षा पहले से जीवन की एक राह को ठीक वैसा ही स्वेच्छाचारी मानती है जैसी जीवन की अन्य राहें होती हैं तो यह सवाल करना उचित ही लगता है कि शिक्षा में ही (खास तौर से) क्यों शुभ की अवधारणाएं उदार विचारों के लिए रास्ता छोड़ें ? यह सार्वजनिक निष्पक्ष शिक्षा के निजीकरण को इंगित करता है क्योंकि इसी तरह की शिक्षा शैक्षिक आदर्शों की विभिन्नता के दायरे में एक विकल्प हो सकती है। इनमें से हर एक को राज्य द्वारा समानता का व्यवहार दिया जाना जरूरी होता है।

हम इस कठिन प्रश्न के अपने उत्तर की रूपरेखाओं को तीन स्थापनाओं में अंकित करना चाहते हैं। (वान हॉफटेन तथा स्मिक 1996, 1997, 1999 स्निक, 1993, 1996, 1999 डे जोंग 1998 को भी देखें)।

पहली बात, स्वायत्तता 'शुभ की विविधता' से कोई संबंध नहीं रखती । अच्छे जीवन के लिए स्वायत्तता कोई भौतिक उत्तर नहीं निर्मित करती। किन्तु शुभ की अवधारणाओं की निर्मिति पर एक विचार को अवश्य सम्मिलित करती है (स्निक 1999; भाग 1.3 देखें)। स्वायत्तता का अर्थ होता है कि शुभ की अवधारणाओं को जांच-परखकर स्वीकार किया गया है, उसकी समीक्षा की गई है या उसे खारिज कर दिया गया है। यह एक ऐसा आदर्श है जो शुभ की अवधारणा के स्वरूप से संबद्ध है। इस स्वरूप को एक अन्तर्वस्तु की जरूरत होती है। यह शुभ की अवधारणा की भी मांग करती है। लेकिन स्वायत्तता शुभ की भिन्न-भिन्न और परस्पर विरोधी

अवधारणाओं को भी सुसंगत बनाती है। विवेकशील लोग जो शुभ की भिन्न-भिन्न परस्पर विरोधी अवधारणाओं को मानते हैं वे भी स्वायत्तता के मूल्य को अनुमोदित करते/कर सकते हैं । इस कारण से स्वायत्तता का अधिकार वह प्रमुख मूल्य है जो उदार राज्य और उसके नागरिकों के बीच संबंध स्थापित करता है।

दूसरी बात, विवेकशीलता के विशिष्ट क्षेत्र के वे सिद्धांत जो आलोचनात्मक सोच और स्वायत्तता को परिभाषित करते हैं, वे सोचने के एक तरीके से संबद्ध होते हैं न कि उसकी अन्तर्वस्तु से। अनुभवातीत या अनुभवातीत-आनुवंशिक तर्कों के साथ उन्हें उचित ठहराया जा सकता है (वान हाफटेन और स्निक 1997)। ये इस क्षेत्र से परे के वे सिद्धांत होते हैं जिन्हें हमारी भाषा के प्रयोग में पहले से ही मान लिया गया होता है (उदाहरण के लिए विरोधहीनता का सिद्धांत), उनका औचित्य-अनुभवातीत आनुवंशिक तर्कों से सिद्ध किया जा सकता है। इन सिद्धांतों को नकार कर हम वास्तव में उन्हें सत्यापित कर देते हैं । क्षेत्र विशेष वाले सिद्धांत जो एक खास क्षेत्र में अपने फैसले को समर्थन और सहारा देते हैं, उनका अनुभवातीत आनुवांशिक तर्कों से बचाव किया जा सकता है। ये सिद्धांत उस क्षेत्र के दृष्टिकोण को निर्धारित करते हैं न कि उसकी अन्तर्वस्तु को (पीटर्स, 1981)। ये सिद्धांत उस क्षेत्र के विभिन्न मतों और परंपराओं में बंटे रहते हैं।

तीसरी बात, यदि स्वायत्तता का अधिकार सार्वभौम अधिकार है और राज्य द्वारा उसे सुरक्षित रखा जाना है तो प्रत्येक बच्चे को स्वायत्तता के विकास का अधिकार है (स्निक 1999; लेविन्सन, 1999)। लेकिन क्या स्वायत्तता के कोई कर्तव्य नहीं बनते। लोग अपने स्वायत्तता के अधिकार को लेने से इन्कार कर सकते हैं और अनुदार समुदायों के सदस्य बने रह सकते हैं । तथापि दूसरों की स्वायत्तता के अधिकार का सम्मान करना उनका कर्तव्य है । इसका तात्पर्य यह है कि अभिभावकों और समुदायों का यह कर्तव्य है कि वे स्वायत्तता के विकास से संबंधित बच्चे के अधिकार का सम्मान करें ।

5. क्या उदार शिक्षा संप्रदाय विशेष के स्कूलों को आर्थिक सहायता देने के लिए अनुकूल है ?

यदि ये तर्क वैध हैं तो निर्भरता की धारणा और उसके साथ मानक उदार विचार को अस्वीकार करना होगा, फिर भी इस अस्वीकृति का स्वत: यह मतलब नहीं निकलता कि उदार शैक्षिक दृष्टिकोण स्वीकारणीय है । एक वैकल्पिक नजरिया भी है जो कहता है कि यद्यपि संप्रदाय विशेष की शिक्षा गौण मूल्यों से बंधी होती है फिर भी संप्रदाय विशेष के स्कूलों को सशर्त आर्थिक सहायता देने के लिए पर्याप्त कारण हैं। यह दृष्टिकोण पहले से मानकर चलता है कि कुछ खास शर्तों के तहत उदार निष्पक्षता सार्वजनिक स्कूलों तथा संप्रदाय विशेष के स्कूलों को पैसा देने में नियमितता बरतती है (फिट्ज मौरिस, 1993; मैक्डोनो 1998; विलियम्स, 1998; बर्टनवुड, 2000) । इस तर्क का सार यह है कि संप्रदाय विशेष की शिक्षा उस सांस्कृतिक सदस्यता की प्राथमिक शुभ को महसूस करवाने में योगदान देती है जो व्यक्तिगत स्वायत्तता के लिए एक शर्त है। इस तरह संप्रदाय विशेष के प्राथमिक विद्यालयों की आर्थिक सहायता का औचित्य सिद्ध हो जाता है । (स्निक 1993, 1999; स्निक और डे जोंग 1995; डे जोंग 1998) । जिस वैकल्पिक दृष्टिकोण का हम बचाव कर रहे हैं उसकी अन्तर्निहित धारणा है कि (अ) शिक्षा एक प्राथमिक शुभ है और (ब) सांस्कृतिक सदस्यता एक प्राथमिक शुभ है (काइम लिक्का, 1989, 1995) । भाग दो में हमने देखा है कि यह बात व्यापक रूप से स्वीकार की गई है कि शिक्षा एक प्राथमिक शुभ है । लेकिन सांस्कृतिक सदस्यता को भी क्या प्राथमिक शुभ माना जाना चाहिये, यह बात अत्यंत विवादास्पद है।

5.1 प्राथमिक शुभ के रूप में सांस्कृतिक सदस्यता

समकालीन उदारवाद में स्वायत्तता का वैयक्तिक अधिकार सर्वोच्च होता है (भाग 1.1 देखें) । जैसा हमने देखा है कि उदार शैक्षिक दृष्टिकोण केवल निष्पक्ष सार्वजनिक शिक्षा को ही प्राथमिक शुभ मानता है । यह प्राथमिक शुभों पर एक सीमाबद्ध और व्यक्ति परक परिप्रेक्ष्य रखता है । समुदायों और परम्पराओं की शुभ की उनकी अवधारणाओं को स्वायत्तता में बाधक की तरह देखते हुए यह स्वायत्तता के विकास के लिए सामाजिक स्थितियों को भी नजरंदाज कर देता है । लेकिन स्वायत्तता का मतलब सारे सांस्कृतिक सन्दर्भों से कटी हुई चयन की सीमाविहीन स्वतंत्रता नहीं होता । स्वायत्तता शुभ की अवधारणा का पहले से ही निर्धारण कर लेती हैं। सामान्य रूप से व्यक्ति जिस प्राथमिक संस्कृति में जन्म लेते हैं, उसी से शुभ की अवधारणा भी प्राप्त करते हैं । व्यक्ति की प्राथमिक संस्कृति में पहल न केवल अपरिहार्य है बल्कि स्वायत्तता के विकास के लिये आवश्यक भी है । इस अर्थ में सांस्कृतिक सदस्यता एक प्राथमिक शुभ होती है क्योंकि यह लोगों को शुभ की अवधारणा बनाने और उसे स्वायत्त तरीके से स्वीकारने, नकारने या समीक्षा करने योग्य बनाती है । (काइम लिक्का 1989, 1995; स्निक और डे जांग, 2001 पृ. 251 को देखें) ।

हमारे विचार काइम लिक्का के दृष्टिकोण के बहुत आभारी हैं। उनके अनुसार उदार राज्य को उन सांस्कृतिक वर्गों के वर्गीय अधिकारों को अवश्य स्वीकार करना चाहिए जो अपनी खास

पहचान सुरक्षित रखने की कोशिश में लगे हैं । आधुनिक उदारवाद को यह स्वीकार करना चाहिए कि समुदाय की सदस्यता तथा साझी सांस्कृतिक गतिविधियां बहुमूल्य जिन्दगियों को चुनने, बनाने और आकार देने के लिए जरूरी हैं (काइमलिक्का, 1989 पृ. 208)। किसी सांस्कृतिक समुदाय की सदस्यता एक प्राथमिक शुभ होती है क्योंकि यह व्यक्तिगत स्वायत्तता और अस्मिता के अभ्यास और विकास के लिये जरूरी होती है । चयन की स्वतंत्रता सामाजिक व्यवहारों, सांस्कृतिक अभिप्रायों और एक मिली-जुली भाषा पर निर्भर रहती है। काइम लिक्का के अनुसार हमारी शुभ की अवधारणा को रूप देने और उसकी समीक्षा करने की योग्यता एक सामाजिक संस्कृति की हमारी सदस्यता से गहराई से जुड़ी होती है ।

सामाजिक संस्कृति की सदस्यता दो कारणों से महत्वपूर्ण होती है । पहला, यह लोगों को चयन का सार्थक संदर्भ प्रदान करती है । अपना जीवन जीना उन विकल्पों को खोजने की प्रक्रिया को भी अपने में शामिल करता है जो हमारी संस्कृति का एक भाग होता है । सार्थक व्यक्तिगत चयन को संभव बनाने के लिये लोगों की सामाजिक संस्कृति तक पहुंच का होना जरूरी है । दूसरा, सांस्कृतिक सदस्यता न केवल लोगों को अपनी पहचान को बनाये रखने के लिए समर्थन देती है बल्कि उन्हें जुड़े होने की सुरक्षा का अहसास भी देती है । बहुत से लोगों का अपनी संस्कृति से गहरा जुड़ाव होता है । यदि हम सांस्कृतिक सदस्यता के महत्व को स्वीकार करें तो हमें यह भी मानना होगा कि राज्य का एक सकारात्मक कर्तव्य उन सांस्कृतिक स्थितियों को सुरक्षित रखने का भी होता है जो स्वायत्त चयन की प्रक्रिया और व्यक्तिगत पहचान को संभव बनाती है।

काइम लिक्का के वर्गीय अधिकारों के बचाव में अगला कदम यह होता है कि अल्पसंख्यक संस्कृतियां समाज की संस्कृतियों के रूप में अपने अस्तित्व बनाये रखने के लिए राज्य से सुरक्षा की मांग करती हैं। वर्गीय अधिकारों को यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि प्रत्येक व्यक्ति की पहुंच समाज की संस्कृति तक हो। यदि किसी समुदाय के सदस्यों की उस पहुंच को रोका जाता है तो इसका तात्पर्य उनकी सांस्कृतिक सदस्यता के प्राथमिक शुभ को पाने की प्रक्रिया को बाधित किया जा रहा है । इस तरह जो वर्ग अन्यायपूर्वक सुविधाओं से वंचित होते हैं उन्हें राजनैतिक पहचान की और सहायता की जरूरत होती है ताकि उनकी सुविधा वंचना की क्षतिपूर्ति हो सके ।

निश्चय ही काइम लिक्का का मत परम पवित्र नहीं है लेकिन हम उसके तरीके को विश्वसनीय मानते हैं जिससे वह अत्यन्त उदार सिद्धांतीकरण करते हुए अतिशय व्यक्तिवाद को सही ठहराने की कोशिश करता है । उदारवाद के इस विश्वसनीय तरीके या उदार नैतिकता को स्वायत्तता के लिये सामाजिक स्थितियों को पहचानना ही होता है । इसके बाद अगला सवाल यह आता है कि उदार नैतिकता और उदार शिक्षा के बीच के संबंध को कैसे संकल्पनाबद्ध किया जाय ?

5.2 उदार नैतिकता और उदार शिक्षा

यह कहा जा सकता है कि (कम से कम पिछले कुछ समय में) उदार शिक्षा को उदारवाद के स्वायत्तता-उदार रूपान्तरण से संप्रत्ययबद्ध किया जाता है । पीटर्स, हर्स्ट और डियर्डन की उदार शिक्षा की दर्शन परम्परा में वैयक्तिक स्वायत्तता का अधिकार केन्द्र में रहता है । शिक्षा का उद्देश्य अभिभावकों के अच्छे जीवन की अवधारणा (पराधीनता) नहीं होता बल्कि वे स्थितियां होती हैं जो व्यक्तियों को इस योग्य बनाती हैं कि वे एक सूचनायुक्त और आलोचनात्मक तरीके से अपनी रायें बना सकें । शिक्षा का उदार आदर्श एक खास तरह की वैश्विक दृष्टि या अच्छाई की अवधारणा उत्पन्न नहीं करता बल्कि एक ऐसा तरीका बनाकर देता है जिसमें वैश्विक दृष्टियां और अच्छाई की अवधारणाओं को बनाया जाना चाहिए ।

इस अवधारणा में स्वायत्तता का अधिकार स्वायत्तता के लिए शिक्षा देने के कर्तव्य का निर्देश देता है । उदार शिक्षा दर असल उदार नैतिकता की ही तार्किक परिणति है (लेबिन्सन, 1999; ब्राइ हाउस,2000) । इसमें यह पूर्व मान्यता है कि उदार शिक्षा के उद्देश्य उदार नैतिकता के प्राथमिक मूल्यों के साथ सीधे सीधे जुडे हों । उदार शिक्षा और उदार नैतिकता के बीच एक आन्तरिक संबंध होता है (स्निक,1999) ।

उदार शिक्षा की अवधारणा कट्टरवादी संप्रदाय विशेष के स्कूलों की अवधारणा की विरोधी होती है सिर्फ अपनी खास संस्कृति के अस्तित्व को बचाये रखने के लिए इस तरह के स्कूलों का अन्तिम उद्देश्य बच्चे को उन मूल्यों से लैस कर देना होता है जिन्हें उसका समुदाय वांछित मानता है। शिक्षा का भौतिक (या असली) उद्देश्य भी उदार शिक्षा के औपचारिक उद्देश्य से अपने को परे रखता है । फिर भी अधिक मध्यम मार्गी संप्रदाय विशेष के स्कूलों की बात कुछ अलग तरह की होती है । उनका उद्देश्य बच्चे को स्वायत्त सोच-विचार के लिए अच्छाई की अवधारणा का प्रारंभिक किन्तु स्थायी ज्ञान देने का रहता है । ऐसे स्कूल उदार स्कूलों की तरह अपने उद्देश्य में पक्के होते हैं । (उदाहरण के लिए देखें - अकर मैन (1980) पीअर्स (1981) कैलन (1997)।) यह मानते हुए कि अच्छाई की अवधारणा की पहल स्वायत्तता के विकास के लिए पहली आवश्यक शर्त होती है, अधिक उदार साम्प्रदायिक स्कूलों को सहन करने तथा उन्हें आर्थिक सहायता देने

के पक्ष में वकालत की जा सकती है (मैकलोहलिन, 1992, विलियम्स 1998) ।

यह मत मानता है कि शिक्षा में दो अलग-अलग स्थितियों को साफ तौर पर देखा जा सकता है । पहली स्थिति में शिक्षा का अर्थ होता है निर्माणात्मक शिक्षा अर्थात बच्चे का शुभ की अवधारणा से प्रारंभिक परिचय। इस स्थिति में संप्रदाय विशेष के स्कूलों को सहायता देने के लिए बहुत वजनदार तर्क दिये जा सकते हैं । इसके बाद की स्थिति औपचारिक शिक्षा की स्थिति होती है । इसमें आलोचनात्मक क्षमताओं का विकास केन्द्रीय उद्देश्य बन जाता है। इस स्थिति में पहुंचने परें संप्रदाय विशेष के स्कूलों को सहायता देने का कोई औचित्य दिखाई नहीं देता । फिर भी शुभ की अवधारणाओं में संप्रदाय विशेष के स्कूलों की पहल को उस आलोचनात्मक क्षमता के विकास में बाधा नहीं पहुंचानी चाहिये जो स्वायत्तता को संभव बनाती है (मैक्डोनोह, 1998) ।

6. संप्रदाय विशेष के स्कूलों को वित्तीय सहायता देने के लिए शर्तें

हमारे विचार में, उदार निष्पक्षता कुछ शर्तों के साथ संप्रदाय विशेष के स्कूलों को वित्तीय सहायता देने के पक्ष में है । स्वायत्तता के उदार दृष्टिकोण से तर्क देते हुए हमने माना है कि एक उदार राज्य का यह कर्तव्य है कि वह स्वायत्तता के लिए हालात पैदा करे और उन्हें सुरक्षित रखे । फिर भी क्योंकि संप्रदायक विशेष के स्कूल कुछ खास शर्तों के तहत स्वायत्तता के लिए शिक्षा के अधिकार के अनुकूल होते हैं । (मैक्लोहलिन, 1992; मोजेज 1997)। उदार राज्य को एक खास वैश्विक दृष्टि रखते हुए समुदायों को अपनी (राज्य की) सहायता के बल पर चलने वाले स्कूल देने चाहिए । लेकिन राज्य को यह निर्णय स्वयं नहीं लेना चाहिए कि बच्चे का परिचय किस प्राथमिक संस्कृति से कराया जाये। यदि इसमें कोई चुनाव का प्रावधान होता है तो उस चुनाव के अधिकार को अभिभावकों और समुदायों के लिए छोड़ देना चाहिए । इसलिए अभिभावकों को यह अधिकार प्राप्त हो कि वे ऐसे संप्रदाय विशेष के स्कूलों को चुन सकें, जो उस शिक्षा को और मजबूत बनायें, जिसे बच्चे घर से सीखकर आते हैं । लेकिन इसके साथ उन्हें कुछ खास शर्तों को पूरा करना जरूरी होना चाहिए । वे शर्तें क्या है ?

पहली शर्त, यदि हम यह मानते हैं कि बच्चे की प्राथमिक संस्कृति से पहचान बाद की स्वायत्तता का ही अभ्यास होती है और निर्माणात्मक शिक्षा को धीरे धीरे औपचारिक शिक्षा के लिए जगह छोड़ देनी चाहिए तो फिर संप्रदाय विशेष के माध्यमिक स्कूलों को आर्थिक सहायता देने का कोई कारण दिखाई नहीं देता । संप्रदाय विशेष के माध्यमिक स्कूलों में दी जाने वाली मूलभूत मूल्यों की शिक्षा स्वायत्तता के विकास में विरोध रखती है । इसलिए संप्रदाय विशेष के प्राथमिक स्कूलों तक आर्थिक सहायता देना ही उपयुक्त हो सकता है (स्निक और डे जोंग, 1995; डे जोंग, 1998, पृ. 343, 348) ।

दूसरी शर्त, संप्रदाय विशेष के स्कूलों को अपने खास समुदाय की नैतिकता को ही बच्चों तक संप्रेषित नहीं करना चाहिए बल्कि एक उदार लोकतांत्रिक समाज की सार्वजनिक नैतिकता का भी प्रसार करना चाहिये । यह सार्वजनिक नैतिकता अपने में दोनों अर्थात मूलभूत सामाजिक नैतिकता (वे आधारभूत नियम जिन्हें हर समाज को स्वीकार करना होता है - जैसे झूठ न बोलना, वायदे निभाना आदि) और उदार नैतिकता, जो स्वाधीनता के अधिकारों और सहवर्ती मूल्यों जैसे सहिष्णुता, परस्पर समानता, भेदभाव न करना और स्वायत्तता आदि को शामिल करती है।

तीसरी शर्त, संप्रदाय विशेष के स्कूलों में बच्चे की स्वायत्तता के विकास के अधिकार का अतिक्रमण नहीं होना चाहिए । जिसमें संप्रदाय विशेष के स्कूलों में दी जाने वाली पक्षपात परक मूल्यों की शिक्षा भी शामिल है, बच्चे के खुले भविष्य के प्रति जागरूक रहने के अधिकार को कुंठित करने के बजाय प्रोत्साहित करना चाहिये।

चौथी शर्त, संप्रदाय विशेष के स्कूलों को न केवल एक विशेष समुदाय के बंधनों को मजबूत बनाना चाहिए बल्कि समाज में एक साझा इतिहास, भाषा और संस्कृति को विकसित करने में अपना योगदान भी देना चाहिए । आधुनिक बहुलतावादी समाजों में सामाजिक सहचारिता के लिये उदार सार्वजनिक नैतिकता के साथ इस साझापन का होना एक प्रमुख शर्त है । एक बहुलतावादी समाज में शिक्षा को विविधता और एकात्मकता के बीच सन्तुलन बनाये रखना चाहिए । संप्रदाय विशेष के स्कूलों में विशिष्टता और सामान्य संस्कृति के बीच संतुलन का रखा जाना परमावश्यक है (क्रिटेन्डन, 1988; मॅक्लोलिन, 1992) ।

संप्रदाय विशेष के स्कूलों का यह अधिकार भी है और कर्तव्य भी है कि वे अच्छाई की एक खास अवधारणा को विकसित करें । लेकिन संप्रदाय विशेष के स्कूलों में भौतिक मूल्यों की शिक्षा की अन्तर्वस्तु और शिल्प को सीमाबद्ध रखने के लिए शर्तें अवश्य रखी जानी चाहिए । उनमें मतारोपण और अलगाव की भावना को प्रश्रय नहीं दिया जाना चाहिए । इसके अतिरिक्त संप्रदाय विशेष के स्कूलों में वैकल्पिक मतों को सामने रखा जाना चाहिए । बच्चों को विविधता से अलग करके नहीं रखना चाहिए । उनमें चलने वाली बहस को न केवल सहन किया जाना चाहिये बल्कि उसे प्रोत्साहित भी किया जाना चाहिए। संक्षेप में, संप्रदाय विशेष के स्कूलों में जिस प्राथमिक संस्कृति को विकसित करने का प्रयास हो, वह उदार भी होनी चाहिए। ◆